खंड 2
विनिमय के रूप

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 4 पारस्परिकता तथा उपहार*

संरचना

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 पारस्परिकता

- 4.2.1 पारस्परिकता की प्रकृति
  - 4.2.1.1 वैधानिक प्रवर्तन
  - 4.2.1.2 तर्कसंगत प्रवर्तन
  - 4.2.1.3 सामाजिक प्रवर्तन

4.3 पारस्परिकता के प्रकार

- 4.3.1 सामान्यीकृत पारस्परिकता
- 4.3.2 संतुलित पारस्परिकता
- 4.3.3 नकारात्मक पारस्परिकता

4.4 उपहार

4.5 उपहारों के आदान–प्रदान के आयाम

- 4.5.1 सामाजिक आयाम
- 4.5.2 आर्थिक आयाम
- 4.5.3 व्यक्तिगत आयाम

4.6 उपहार देने के दृष्टिकोण

- 4.6.1 नृविज्ञानी दृष्टिकोण
- 4.6.2 समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण
- 4.6.3 आर्थिक दृष्टिकोण

4.7 सारांश

4.8 संदर्भ

4.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप पढ़ने के बाद आप समझ सकेंगे:–

- पारस्परिकता और उपहार की धारणाओं का वर्णन;
- प्रवर्तन के तीन रूपों के आधार पर पारस्परिकता की प्रकृति की व्याख्या;
- पारस्परिकता के विविध रूपों का वर्णन;
- उपहार देने संबंधी विविध आयामों का परीक्षण; और

* डॉ. ऐजाज अहमद गिलानी द्वारा लिखित।

- उपहार देने के दृष्टिकोणों के आधार पर उपहार देने की प्रक्रिया का अध्ययन।

4.1 प्रस्तावना

पहले खंड में आप, आर्थिक समाजशास्त्र की परिचय संबंधी समाज, संकृति और अर्थव्यवस्था के संबंधों के बारे में पढ़ चुके हैं। आपको बताया गया था कि इन से संबंधित दो विचार धारायें कौन–कौन सी हैं – औपचारिकतावाद तथा तात्विकतावाद। इन दो विचारधाराओं के मिलने से आर्थिक समाजशास्त्र गठित होता है। आर्थिक समाजशास्त्र का अंततः सविस्तार वर्णन किया गया है।

अगले खंड में, आदान–प्रदान के रूपों का वर्णन पहली इकाई में किया गया है। हम पारस्परिकता और उपहार देने की अवधारणाओं की समाज विज्ञान की दृष्टि से व्याख्या करेंगे। इस इकाई को दो भागों में विभाजित किया गया है। हर भाग में पारस्परिकता और उपहार दोनों धारणाओं को अलग–अलग क्रमानुसार वर्णन किया जायेगा। प्रथम भाग में पारस्परिकता की धारणा पर विचार करते समय स्पष्ट रूप से यह बताने का प्रयास किया गया है कि आदान–प्रदान के क्या–क्या तरीके हैं और पारस्परिकता की प्रकृति को स्पष्ट करते संबंध किस प्रकार विकसित होते है। पारस्परिकता की प्रकृति को स्पष्ट करते समय निष्पक्षता और न्यायसंगतता का पूरा ध्यान रखा गया है। इस इकाई में पारस्परिकता के प्रकारों तथा उनके हमारे समाजों में संबंध स्थापित करने के लिए अंतर्निहित महत्व पर भी प्रकाश डाला जायेगा। इस इकाई के दूसरे भाग में उपहारों के अंतर्निहित भावनाओं पर प्रकाश डाला जायेगा और यह बताने का प्रयास भी किया जायेगा कि विभिन्न प्रकार के लोगों के बीच संबंधों को उपहार किस प्रकार प्रभावित करते हैं। उपहार देने की तीन व्यापक पद्धतियों का भी वर्णन किया जायेगा और यह भी बताया जायेगा कि उपहार कैसे दिये जाते हैं और उपहार देने के पीछे किस तरह उद्देश्य छिपे होते हैं।

4.2 पारस्परिकता

पारस्परिकता उसे कहते हैं जो लोगों अथवा उनके समूहों के बीच चीजों के आदान–प्रदान में अंतर्निहित होती है। जिसमें या तो दोनों पक्ष (उपहार देने वाला और प्राप्त करने वाला) या तो दोनों पक्ष परस्पर लाभान्वित होते हैं और यदि नहीं तो कम से कम एक पक्ष अवश्य लाभावन्त होता है। यह एक प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से सामाजिक संबंधों का विकास होता है। नये संबंध बनते हैं और पुराने संबंध और अधिक प्रगाढ़ हो जाते हैं। आदान–प्रदान से होने वाले लाभों और सदभावों को बिगाड़ने का एक सीधा सा उदाहरण है चीजों को किसी व्यक्ति को देने की वजाय उन्हें बाजार में बेच देना। बाजार में बेचने वाला तब सक्रिय होता है जब खरीदार उसे वस्तु का मूल्य देता है खरीदने वाले से हमेशा प्रतिदान की उम्मीद रहती है। इस प्रक्रिया में बेचने वाले के व्यवहार को खरीदने वाले की प्रति क्रिया इस आधार पर उचित ठहराई जा सकती है कि वह बेचने वाले को उस वस्तु के रख रखाव की कीमत देता है और इस प्रकार दोनों के बीच एक प्रकार के संबंधों की स्थापना होती है। कुछ विद्वान (जैसे होमैन्स, 1958 तथा गोल्डनर, 1960) यह तर्क देते है कि दोनों पक्षों के बीच इस प्रकार का संबंध यह अपेक्षा रखते हैं कि उनके बीच वस्तुओं का आदान–प्रदान जारी रहेगा, यदि ऐसा नहीं होता है तो आदान–प्रदान की प्रक्रिया के आधार पर विकसित होने वाले संबंध हल्के पड़ जायेंगे। इसका अर्थ यह है कि जिस

आदमी ने वस्तु खरीदी है वह बेचने वाले के प्रति एक प्रकार के दायित्व बोध अथवा कृतज्ञता से भरा हेाता है। इसका अर्थ यह भी नहीं है कि इस प्रकार का आदान–प्रदान सदैव संतुलित ढंग से चलता रहता है जिसमें बेचने वाले की हर क्रिया को खरीदने वाले की ओर से लगातार एक जैसी प्रतिक्रिया प्राप्त होती रहेगी। खरीदने वाले और बेचले वाले के बीच बना संबंध स्थाई और टिकाऊ नहीं हो सकता क्योंकि आदान–प्रदान के दौरान संपर्क में आने से संबंधों में जो नवीनता आ जाती है, दुबारा खरीदारी न करने पर नवीनता का वह क्रम टूट जायेगा।

गोल्डनर (1960) के अनुसार आदान–प्रदान की यह प्रथा सामाजिक प्रणालियों में अंतर्निहित होती है, जिसमें बेचने वाले और खरीदने वाले देने और प्राप्त करने की क्रियाओं के द्वारा परस्पर संबंध स्थापित करते हैं। आर्थिक तथा गैर आर्थिक उत्पाद अथवा अन्य सेवायें अन्य प्रकार के आदान–प्रदानों के लिये मार्ग प्रशस्त करती हैं। इसका अर्थ यह है कि बेचने वालों और खरीदने वालों की संतुष्टि से यह तय होता है कि आदान–प्रदान द्वारा उत्पन्न होने वाले प्रोत्साहन का स्वरूप क्या है। इस प्रक्रिया के दौरान जन्म लेने वाला व्यवहार और संतुष्टि एक दूसरे को एक–दूसरे के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने के आधार बन सकते हैं। दोनों की संतुष्टि इस बात से भी तय की जाती है कि आदान–प्रदान बराबरी का अथवा संतुलित है या नहीं इस प्रकार खरीदने और बेचने वालों के बीच एक प्रकार की आपसी निर्भरता होती है। हमारे समाजों में इस प्रकार के आदान–प्रदान में श्रम विभाजन भी शामिल हो जाता है जो देने और प्राप्त करने की प्रक्रिया के माध्यम से पारस्परिक व्यापार का आधार बनता है।

पारस्परिकता इस बात पर निर्भरता करती है कि आदान–प्रदान की प्रक्रिया दोनों पक्षों को स्वीकार्य हो। इसके ठीक उलट यदि वस्तुओं या सेवाओं का आदान–प्रदान गैर बराबरी वाले लोगों के बीच होता है अर्थात दोनों ही आदान–प्रदान की प्रक्रिया से संतुष्ट नहीं होते तो इस प्रकार के आदान–प्रदान को पारस्परिक आदान–प्रदान नहीं कहा जायेगा। ऐसी आर्थिक संबंधी की ऐसी व्यवस्था जिसमें एक पक्ष असंतुष्ट रहता है, संबंधों को तोड़ देती है और यह आदान–प्रदान गैर बराबरी का या असंतुलित माना जायेगा। इस प्रकार आदान–प्रदान को पारस्परिकता स्थायित्व एवं अनुरूप प्रदान करती है और लेने वाले और देने वाले दोनों एक दूसरे के प्रति कृतज्ञता से भरे रहते हैं। इससे संबंध प्रगाढ़ होते हैं और उनमें संतुलन बना रहता है।

4.2.1 पारस्परिकता की प्रकृति

पारस्परिकता की मौलिक विशेषता यह है कि दान के बदले वेसा ही प्रतिदान दिया जाय। इसमें पारस्परिकता की नैतिकता निहित रहती है। यह प्राप्त करने वाले व्यक्ति में देने वाले के प्रति कृतज्ञता का भाव उत्पन्न करती है। पारस्परिकता की नैतिक प्रकृति की जड़ें न्यायसंगतता और निष्पक्षता की भावना में अंतर्निहित होती हैं। एक पक्ष से दूसरे पक्ष को जो सद्भावनाएँ प्रदान की जाती हैं। उन्हें पुरस्कार माना जाना चाहिए तथा सभी वस्तुओं तथा सेवाओं के प्रति प्रतिपूरक न्याय माना जाना चाहिए। (कोम, 2008) यह विचार न्याय के वैसे प्रतिमान के रूप में समझा जा सकता है, जैसा जॉन रॉल्स ने 1971 में प्रकाशित अपनी पुस्तक 'थ्योरी ऑफ जस्टिस' में लिखा है। एक प्रकार का प्रतिकार मूलक न्याय, जैसे 'आंख के बदले आंख'। प्रतिकारी न्याय के अनुसार, जो प्राप्त होता है उसका प्रतिस्थानी या तो धन हो सकता है या उत्पाद के बदले उत्पाद या सेवाओं के बदले सेवाएँ हो सकती हैं, जैसाकि वस्तु विनिमय प्रणाली में होता था। इस प्रकार के पारस्परिक आदान–प्रदान वैधानिक समझौतों के माध्यम से

भी किये जा सकते हैं। पारस्परिकता आर्थिक तथा गैर–आर्थिक वस्तुओं के निरंतर आदान–प्रदान में अंतर्निहित रहती है। यद्यपि अदला–बदली में प्राप्त होने वाली चीजें बराबर कीमत की हैं या नहीं या बात कभी स्पष्ट नहीं हो पाती। यह अनिश्चितता और अस्पष्टतता आदान–प्रदान की प्रथा के लिए एक बड़ी चुनौती है। इसे तीन रूपों में सुलझाया जा सकता है – वैधानिक आधार, तर्कसंगतता तथा सामाजिक प्रवर्तन।

4.2.1.1 वैधानिक प्रवर्तन

वैधानिक प्रवर्तन में दोनों पक्षों को आदान–प्रदान के समझौते के लिए तैयार किया जाता है जो दोनों पक्षों को मान्य हो यह एक वैधानिक क्रिया होती है जिसके माध्यम से दोनों पक्ष स्वतंत्रतापूर्वक आदान–प्रदान की शर्तों को स्वीकार कर लेते हैं। इस तरह के समझौते प्रायः समान पक्षों के बीच होते हैं, वैधानिक प्रवर्तन की प्रक्रिया के अंतर्गत यदि एक पक्ष दूसरे पक्ष के साथ तय की गई शर्तों का उल्लंघन करे तो दूसरा पक्ष उसके खिलाफ कानूनी कार्रवाई कर सकता है। ऐसी स्थिति में दोनों पक्षों के बीच तनाव उत्पन्न हो जाता है और उन पर पारस्परिकता का सिद्धांत लागू नहीं होता।

4.2.1.2 तर्कसंगत प्रवर्तन

तार्किक प्रवर्तन तर्क पर आधारित होता है दोनों पक्षों के निहित स्वार्थ आदान–प्रदान के पीछे मौजूद रहते हैं। जैसे – यदि आदान–प्रदान की प्रक्रिया बार–बार अस्तित्व में आती है तो इसका अर्थ यह है कि आर्थिक अथवा गैर आर्थिक वस्तुओं के बदलने में दोनों को लाभ हो रहा है। ऐसी अवस्था में पारस्परिकता की अनिश्चियता कम हो जाती है, और दोनों पक्षों के व्यवहार में अंतर्निहित स्वार्थ की भावना पारस्परिकता के प्रवर्तन से विलीन हो जाती है।

4.2.1.3 सामाजिक प्रवर्तन

सामाजिक प्रवर्तन की प्रक्रिया में दो से अधिक लोग भी आदान–प्रदान में शामिल हो जाते हैं। आदान–प्रदान की साख और क्षमता सामाजिक स्तर पर लोगों को इसके लिए आमंत्रित करती हैं। इस प्रक्रिया में दोनों पक्षों को पहले से निजी स्तर पर कोई जानकारी नहीं होती। सामाजिक प्रक्रिया के अंतर्गत जब लोगों की आदान–प्रदान की जानकारी प्राप्त होती है तो वे इसे सामाजिक स्तर पर अपना लेते हैं। साथ ही यह सामाजिक फलक यह सुनिश्चित करता है कि दोनों पक्ष पारस्परिकता के नियमों का सम्मान कर रहे हैं, क्योंकि ऐसा न करने की स्थिति में आदान–प्रदान की कड़ी टूट जाती है।

4.3 पारस्परिकता के प्रकार

मार्शल सालिन ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'स्टोन एज इकोनॉमिक्स' में जो 1972 में प्रकाशित हुई थी। तीन प्रकार की पारस्परिकता का उल्लेख किया है, जो पहले के लोगों में पाई जाती थी। (ब्रोनिशलॉ मैलिनोवस्की, 1922 तथा मार्सेल मॉस 1990 से) और अब भी पाई जाती है। पारस्परिकता के ये तीन प्रकार हैं – सामान्यीकृत पारस्परिकता, संतुलित पारस्परिकता तथा नकारात्मक पारस्परिकता। पारस्परिकताओं के यह तीनों प्रकार सामाजिक संगठन में संबंधों के स्तरों की विविधता दर्शाते हैं। सामान्यीकृत पारस्परिकता सामाजिक समूहों द्वारा अस्तित्व में आती है, संतुलित

पारस्परिकता निकटवर्ती समुदायों द्वारा अपनाई जाती है जो आदान–प्रदान की प्रक्रिया में विश्वास रखते हैं तथा नकारात्मक पारस्परिकता उन समुदायों के बीच पनपती है जो दूर स्थित होते हैं, तीनों प्रकार की पारस्परिकतायें किसी समाज में एक साथ भी मौजूद हो सकती हैं और सम्मिलित रूप से संबंध निर्माण की प्रक्रिया में अपना–अपना योगदान दे सकती हैं।

4.3.1 सामान्यीकृत पारस्परिकता

सामान्यीकृत पारस्परिकता के पीछे सद्भाव और सहयोग की भावना सन्तिहित होती है। इस प्रकार की पारस्परिकता बदले में कुछ पाने की चाहत नहीं रखती। इसका अर्थ यह है कि देने वाले को (वस्तुएं या सेवाएं) देने में इतना संतोष प्राप्त होता है कि उसे बदले में कुछ दिया जाये, ऐसी धारणा उसके मन में नहीं रहती। अर्थात इस पारस्परिकता के अंतर्गत व्यक्ति निःस्वार्थ भाव से देता है। इस प्रकार की पारस्परिकता उन समाजों में मौजूद रहती है जहां लोगों में परस्पर आत्मीयता का भाव रहता है और वे अपनी चीजें और सेवायें दूसरों को देने में खुशी का अनुभव करते हैं। वे यह मानकर चलते हैं कि देना हमारा दायित्व है, इस प्रकार की पारस्परिकता पारम्परिक समाजों तथा आधुनिक समाजों में भी उन लोगों में देखने को मिलती है जिनमें माता–पिता बच्चों का पालन–पोषण तथा उनकी देखभाल बदले में कुछ पाने की भावना के बिना निःस्वार्थ भाव से करते हैं और उनके लिए अधिक से अधिक करने का भाव उनके मन में आनन्द और उल्लास उत्पन्न करता है। इसके (1974) तर्क देता है कि सामान्यीकृत पारस्परिकता में प्राप्त होने वाली वस्तुएं तथा सेवाएं देने वाले को प्राप्त करने वाले द्वारा नहीं लौटाई जातीं, परंतु अन्य लोगों द्वारा लौटाई जाती हैं। इस कारण से फाउलर तथा क्रिस्टेकिस (2010) इसे आगे भुगतान वाली पारस्परिकता कहते हैं।

सामान्यीकृत पारस्परिकता को इस प्रकार भी समझा जा सकता है, जैसाकि महान विद्वाना फाउलर और क्रिस्टेकिस (2010) ने कहा है। उनके अनुसार यदि किसी व्यक्ति को कोई अन्य व्यक्ति सहयोग करता है तो सहयोग प्राप्त करने वाले व्यक्ति के मन दूसरे व्यक्तियों को सहयोग देने की भावना पैदा हो जाती है। उनका यह सहयोग बदले में कुछ पाने की भावना पर आधारित नहीं होता। इसका अर्थ यह है कि लोग दूसरों की सहायता केवल इसलिए नहीं करते कि पहले किसी ने उनकी सहायता की थी और इसलिए भी नहीं कि बदले में कोई उनकी सहायता अवश्य करेगा। इस प्रकार इस पारस्परिकता के अंतर्गत यह संभावना हमेशा बनी रहती है कि जिस व्यक्ति ने पहले किसी की सहायता की है उसकी भविष्य में कोई सहायता अवश्य करेगा। इस क्रम में आरम्भ में सहायता देने वाले और बाद में सहायता प्राप्त करने वाले व्यक्तियों की कोई पहचान नहीं हो पाती। इस तरह की पारस्परिकता उन मानव समूहों में अधिक पाई जाती है जो कम संख्या में एक साथ निवास करते हैं और उनके आपस में अंतर्संबंध होते हैं, या उनके बीच सांस्कृतिक संबंधों की कड़िया होती हैं।

गतिविधि – 1

उपरोक्त भाग के अध्ययन के बाद, अपने परिवार के सदस्यों अथवा मित्रों को इकट्ठा करिये और उन्हें ऐसी सच्ची कहानियां सुनाइये जो मनुष्यों द्वारा मनुष्यों की सहायता पर आधारित हों। जिनमें सहायता करने वाले और सहायता प्राप्त करने वाले एक–दूसर को जानते तक न हों।

सामाजिक समूहों में पारस्परिकता पर दो पृष्ठों में एक निबन्ध लिखिये और अपने अध्ययन केंद्र पर पहुंचकर दूसरे छात्रों के साथ इस विषय पर परिचर्चा का आयोजन कीजिये।

4.3.2 संतुलित पारस्परिकता

इस पारस्परिकता में समुदायों और व्यक्तियों के बीच संबंधों का निर्माण करना तथा इन संबंधों को पारस्परिकता द्वारा लम्बे समय तक निभाना शामिल है। संतुलित पारस्परिकता का एक महत्वपूर्ण उदाहरण है उत्सवों तथा सांस्कृतिक अवसरों पर दूसरों को आमंत्रित करना ऐसे अवसरों पर वस्तुओं अथवा सेवाओं का स्थानांतरण भी किया जाता है। उपहारों के रूप में चीजों का आदान–प्रदान प्रायः बराबर की हैसियत के लोगों के बीच होता है, जिसमें अपेक्षायें भी सन्निहित होती हैं और संतुष्टि भी। संतुलित पारस्परिकता में बदले में जो कुछ भी दिया जाता है वो या तो पारस्परिक अपेक्षा पर आधारित होता है या फिर देने वाले द्वारा की गई मांग पर आधारित होता है। यद्यपि देने वाला तुरंत ही बदले में कुछ नहीं चाहता वह समय देता है और उम्मीद करता है कि जिसे दिया गया है वह आगे चलकर कुछ अवश्य देगा। यदि बदले में कोई व्यक्ति कुछ भी नहीं देता तो देने वाले की भावना को चोट पहुंचती है और वो आगे से दूसरों को अपनी सेवाएं और वस्तुएं देना बन्द कर देता है। देने वाले को जब लम्बे समय के बाद भी बदले में कुछ भी प्राप्त नहीं होता तो वह न केवल देने की प्रक्रिया को बन्द कर देता है बल्कि वह दूसरे लोगों से ऐसी बातें भी करने लग जाता है कि हमने इसको दिया था परंतु इसने बदले में हमें कुछ भी नहीं दिया। यहां तक कि देने वाला प्राप्त करने वाले से अपने संबंध भी तोड़ लेता है और तब तक दुबारा उससे संबंध स्थापित नहीं करता जब तक वह उसके द्वारा दी गई वस्तुओं अथवा सेवाओं के बदले में कुछ लौटाना नहीं। संतुलित पारस्परिकता में देने वाले और लेने वाले के बीच कोई सौदेबाजी या सशर्त वार्ता नहीं होती। यही इस पारस्परिकता का मौलिक आधार है।

संतुलित पारस्परिकता में बदले में दी जाने वाली वस्तु या सेवा की कीमत पहले दी जाने वाली वस्तु या सेवा के लगभग समान ही होती है। अतः इसमें एकतरफा स्थानांतरण की गुंजाइश नहीं होती जो लोग दूसरों को कुछ देते है, यदि बदले में उन्हें कुछ भी न मिले तो वे बुरा मान जाते हैं और नाराजगी प्रकट करने लगते हैं। भारतीय पारिवारिक संरचनाओं में दो पक्षों के बीच चीजों के आदान–प्रदान से संबंध मजबूत होते हैं और आपसी प्रेम–भाव बढ़ता है। यदि एक ओर से दिया जाए और दूसरी ओर से कुछ भी नहीं लौटाया जाए तो सम्बंधों की प्रगाढ़ता कम होने लगती है और एक दिन संबंध टूट जाते हैं। इस प्रकार दो पक्षों के बीच संबंध आदान–प्रदान की समझ पर निर्भर करते हैं कोई शर्त या सौदेबाजी नहीं होती।

4.3.3 नकारात्मक पारस्परिकता

नकारात्मक पारस्परिकता सामान्यीकृत पारस्परिकता के विपरीत होती है और अर्थशास्त्रियों तथा समाज–विज्ञानियों के बीच इस प्रकार की पारस्परिकता का चलन प्रायः नहीं है। मार्शल साहलिन्स ने 1972 में प्रकाशित अपनी पुस्तक 'स्टोन एज़ इकोनोमिक्स' में इस पारस्परिकता का वर्णन किया है। इसमें एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति की मेहनत के फल को प्राप्त करता है। इसकी विशेषता यह है कि दोनों पक्ष अधिक से अधिक पाना चाहता है, पर बदले में कम से कम देना चाहते हैं। अर्थात सेवाओं या

वस्तुओं के आदान–प्रदान में स्वयं लाभ में रहने और दूसरे को घाटे में रखने की मनोवृत्ति प्रधान रहती है। एक व्यक्ति दूसरे को घाटा पहुँचाने की नियत से काम करता है और उसका व्यवहार पूरी तरह असहयोग करने का रहता है।

कोम (2008.11) उसका वर्णन करते हुए कहता है कि – 'एक व्यक्ति दूसरे से बदला लेने की मानसिकता रखता है, उसे नुकसान पहुँचाना चाहता है जो कि सामाजिक–आर्थिक परिवेश का अभिन्न अंग है, पारस्परिकता का क्रम टूटता रहता है और अंततः पारस्परिकता की भूमिका समाप्त हो जाती है। नकारात्मक पारस्परिकता में व्यावहारिकता का अभाव रहता है, जो कि सामाजिक–आर्थिक परिवेश का अभिन्न अंग हैं, व्यवहार नाप तौल कर किया जाता है और कोशिश रहती है कि कम किये जाने पर बदले में ज्यादा ही मिले। इसमें जवाबी कारवाई पर आधारित आदान–प्रदान की भावना निहित रहती है। सौदेबाजी आधारित वस्तुविनिमय होता है, छूत, चोरी, झपटमारी, छल–कपट आधारित गतिविधियाँ शामिल होती हैं, सामाजिक सम्बंधों का अभाव रहता है, (इनगोल्ड, 1986) तथा 'आंख के बदले आंख निकाल देना तथा दात के बदल दांत तोड़ देने' की भावना मौजूद रहती है (फेहर व गेचटर, 1998:845)।

बोध प्रश्न 1

1) पारस्परिकता से आप क्या समझते हैं? कुछ पंक्तियों में उत्तर दें।

.....

.....

.....

.....

.....

2) रिक्त स्थान भरिए –

अ) ..... आश्वासन देता है कि दोनों पक्ष आदान–प्रदान के लिए समझौता करते हैं तथा सशर्त बातचीत करते हैं।

ब) ..... पारस्परिकता पारस्परिकता की प्रकृति तय करती है।

3) निम्न से क्या पारस्परिकता की श्रेणी में नहीं आता?

अ) सकारात्मक पारस्परिकता

ब) संतुलित पारस्परिकता

स) वैकल्पिक पारस्परिकता

द) नकारात्मक पारस्परिकता

4.4 उपहार

उपहार को दुनिया भर के मानव समाजों का सामाजिक, आर्थिक अथवा सांस्कृतिक आदान–प्रदान माना जाता है। सामाजिक संबंधी को स्थायी बनाने में उपहारों की मूलभूत भूमिका है। (केमरर, 1988) उपहार भौतिक पदार्थ भी हो सकता है और गैर भौतिक भी जिसे स्वेच्छा से दिया जाता है या मांग या आवश्यकता की पूर्ति के रूप में आती हैं। भौतिक पदार्थों में वस्तुएँ या नकदी या अन्य ठोस चीज, अभौतिक पदार्थों में

समय, देखभाल, प्यार आदि अदृश्य चीजें शामिल हैं। उपहारों की मूलभूत विशेषता यह है कि उसमें एक तरह की पारस्परिकता शामिल होती है और इसी कारण से उपहार देने की प्रक्रिया को मनुष्यों की आकर्षक तथा सर्वसम्मत गतिविधि माना जाता है। उपहारों को सामाजिक अखण्डता में सहयोगी माना जाता है, क्योंकि उपहारों के माध्यम से सांस्कृतिक आदान–प्रदान होता है और सामाजिक एकता बढ़ती है। एडवार्ड शीफेलिन ने 1980 में प्रकाशित अपने लेख 'रैसीप्रोसिटी एण्ड द कन्सट्रक्शन ऑफ रियलिटी' में लिखा है – उपहार देना ... सामाजिक दायित्वों को गति प्रदान करना है, यह उपहार को समझने का एकतरफा तरीका हो सकता है, जबकि आर्थिक शब्दावली में उपहार एक तरह का व्यापार है जो पारस्परिक आदान–प्रदान के माध्यम से किया जाता है। उपहार आपसी व्यापार का एक प्रकार है। सामान्यतः उपहार एक भौतिक वस्तु है जिसका आदान–प्रदान किया जाता है। व्यापारिक सम्बंधों से प्राप्त होने वाले विभिन्न प्रकार के उपहार, जिनमें भौतिक तथा अभौतिक दोनों प्रकार के उपहार शामिल हैं, समान रूप से दिये और लिए जाते हैं।

उपहार देने के अर्थशास्त्र को समझने के लिए उपहारों के पीछे छिपी संवेदना को समझना जरूरी है। उपहारों के अर्थशास्त्र पर किये गये अध्ययनों से पता लगता है कि उपहार देने वाले उपहारों को विशेष महत्व देते हैं। जबकि तुलनात्मक रूप से उपहार प्राप्त करने वाला उसे इतना महत्व नहीं देता अर्थात यदि उपहार देने वाले की दृष्टि में उसका महत्व उपहार की वास्तविक कीमत से ज्यादा होता है और उपहार लेने वाले की दृष्टि में उपहार की वास्तविक कीमत से ज्यादा होता है और उपहार लेने वाले की दृष्टि में उपहार का महत्व उसकी वास्तविक कीमत से कम होता है तो इन दोनों पक्षों के बीच उपहारों के लेन–देन की प्रक्रिया अन्ततः समाप्त हो जाती है। यद्यपि 'चील' ने अपनी 1988 में प्रकाशित हुई पुस्तक 'द गिफ्ट इकोनॉमी' में तर्क दिया है कि इन तमाम आर्थिक अपर्याप्तताओं के बावजूद, जिनका उपहार लेने वाले और देने वाले दोनों की मानसिक अवस्था पर विशेष प्रभाव पड़ता है, उपहारों के आदान–प्रदानों की प्रथा विश्व भर में व्याप्त है। इतना ही नहीं बाजार में नये–नये उपहार लगातार आते रहते हैं और उपहारों के आदान–प्रदान का रिवाज बढ़ता ही जा रहा है। गार्नर तथा वैगनर को 'इकोनॉमिक डाइमेन्शन्स ऑफ हाउस होल गिफ्ट गिविंग' शीर्षक वाला लेख जो 1991 में प्रकाशित हुआ था उसमें यह कहा गया है कि उपहार चाहे भौतिक हो या अभौतिक वह एक आर्थिक अथवा सामाजिक स्थानांतरण है। यदि इसमें दो पक्षों के बीच पहले से स्थापित संबंध मौजूद हैं तो चीजों के आदान–प्रदान को उपहार ही माना जायेगा। पहले से ही स्थापित संबंधों के परिणामस्वरूप दोनों पक्षों पर यह दबाव होता है कि वे उपहारों का आदान–प्रदान करें।

4.5 उपहारों के आदान–प्रदान के आयाम

लेवी स्ट्रॉस ने नृविज्ञान पर आधारित, 1969 में प्रकाशित अपनी पुस्तक 'द एलीमेन्ट्री स्ट्रक्चर्स ऑफ किनशिप' में लिखा है – उपहारों के आदान–प्रदान को आर्थिक संदर्भ में देखना उपहार की धारणाओं को समझने का एकतरफा नजरिया है। विभिन्न संदर्भों में दिये जाने वाले उपहारों को तीन आयामों के माध्यम से समझा जा सकता है।

4.5.1 सामाजिक आयाम

सामाजिक पृष्ठभूमि में उपहार देने का उद्देश्य सामाजिक संबंधों को बढ़ावा देना है। साथ ही उपहार देने के पीछे देने वाले की यह ईमानदारी छिपी होती है कि वह उपहार प्राप्त करने की खुशियों में ओर कठिन वक्त में भी उसके साथ खड़ा है। यद्यपि सहभागिता में यह मंतव्य अप्रकट ही रहता है। सामाजिक आयाम में उपहार देने वाले और लेने वाले के बीच जुड़ावों तथा संबंधों का प्रदर्शन होता है, यद्यपि कभी–कभी धोखा न हो जाए, ऐसे नकारात्मक उद्दीपन भी होते रहते हैं, परन्तु हर मामले में नहीं। कभी–कभी उपहारों के पीछे सकारात्मक मंतव्य अधिक प्रबल रहते हैं, जैसे सामाजिक घनिष्ठता बढ़ाना तथा दूरियां रहने से हल्के पड़े सम्बंधों की अंतरंगता को बनाये रखना। मार्सेल मॉस (1990) के अनुसार इस युग में उपहार देने के पीछे दो उद्देश्य छिपे रहते हैं – पहला उपहार देना दोनों पक्षों के बीच सम्बंधों को सुदृढ़ बनाना है दूसरे उपहार देना व्यवहार की एक औपचारिकता है। उपहार देने व लेने में उपहार की कीमत उपहार की गुणवत्ता तथा सम्बंधों को जोड़ने की क्षमता अंतर्निहित रहती है। उदाहरण के लिए अंतरंग सम्बंधों में उपहार देने से उपहार की कीमत या उपयोगिता बढ़ जाती है। यदि सम्बंधों की प्रगाढ़ता में कमी आ रही है, और फिर भी उपहार देना जारी रखा जाए तो उपहार की उपयोगिता बढ़ जाती है। इस प्रकार संबंध की प्रकृति तथा उपहार के तत्वों के बीच एक प्रकार अंतर्सम्बंध होता है। उपहार के आदान–प्रदान के सामाजिक दायरे में व्यक्तिगत तथा साझे हितों तथा विश्वास का स्तर सदा ऊँचा रहता है।

4.5.2 आर्थिक आयाम

आर्थिक आयाम का संबंध उपहार देने के पीछे छिपे निहित आशय से होता है और उपहार की कीमत खुलासा करना भी उसमें शामिल होता है। उपहारों का आदान–प्रदान उपहार प्राप्त करने वाले व्यक्ति के लिए पर्याप्त रूप से लाभकारी माना जाता है। यह प्राप्त करने वाले पर एक प्रकार का दवाब बनाता है और उसे एक दायित्व देता है कि वह बदले में देने वाले को कुछ दे। ऐसे आदान–प्रदानों में उपहार प्राप्त करने वाले की प्रतिष्ठा उस पर विनिमय का दवाब बनाती है और यदि वह उपहार के बदले में कुछ न दे पाये तो संबंध के टूट जाने का अंदेशा भी उसके मन में पैदा करती है। जैसा कि सामाजिक आयाम में व्याख्या की गई है, आर्थिक आयाम के केन्द्र में भी उपहार के तत्व मौजूद रहते हैं। यदि आदान–प्रदान करने वाले उपहारों की कीमत या महत्व लगभग बराबर है तो इस आदान–प्रदान को संतुलित माना जाता है। आर्थिक आदान–प्रदान के सिद्धान्त के अनुसार उपहार देना दोनों पक्षों के बीच एक प्रकार का समझौता होता है। और उसमें यह भाव अंतर्निहित हेाता है कि उपहार लेने और देने के बीच संतुलन की स्थिति हो। यद्यपि इन मामलों में संबंध औपचारिक होते हैं, तथा दोनों पक्षों के निहित हित अथवा स्वार्थ इसमें शामिल होते हैं, परन्तु यह आवश्यक है कि आदान–प्रदान की निष्पेक्षता दोनों पक्षों को संतुष्टि प्रदान करती है तथा आदान–प्रदान की प्रक्रिया को संतुलित बनाती है। उपहार के आर्थिक आयामों में पारस्परिक संबंध आवश्यक नहीं होते। इसलिए उसमें विश्वास बहुत कम होता है या फिर होता हीं नहीं।

गतिविधि – 2

किसी के विवाह समारोह में जाओ या फिर तुम्हारे परिवार में किसी की शादी हुई हो तो उसे याद करो, और शादी के अवसर पर दिये गये उप उपहारों की सूची बनाओ जो दूल्हा और दुल्हन के परिवारों की ओर से (जैसे गहने, कपड़े, उपकरण आदि) एक दूसरे को दिये गये थे। समाजशास्त्री या सामाजिक नृविज्ञानी की दृष्टि से विवाह के उपहार तथा उनका महत्व विषय पर एक पृष्ठ का आलेख तैयार कीजिये। फिर अपने अध्ययन केंद्र पर जाकर अपने साथियों से इस आलेख पर चर्चा कीजिए।

4.5.3 व्यक्तिगत आयाम

व्यक्तिगत आयाम में उपहारों के आदान–प्रदान की जो पद्धति अपनाई जाती है उसमें उपहार देने वाले और उपहार प्राप्त करने वाले दोनों के अनुभव तथा उनकी पहचान मौजूद रहती है। इस प्रकार उपहार देने वाले का व्यक्तित्व और उसकी पहचान का पता इस बात से लगता है कि उसने उपहार किस तरह दिया है। इसी के समानांतर उपहार प्राप्त करने वाले की स्वीकृति का तरीका अथवा उपहार न लेने की इच्छा जाहिर करना यह दर्शाता है कि उसका व्यक्तित्व कैसा है और उसकी पहचान क्या है। उपहार लेने–देने अथवा उपहार लौटाने के तरीकों से उपहार देने वाले तथा उपहार लेने वालो दोनों पक्षों की पहचान सामने आ जाती है अर्थात इस प्रकार के उपहार में व्यक्तिगत पहचान को सामने लाना उद्देश्य उपहार लेने–देने के पीछे छिपा रहता है। उपहार देने के विभिन्न प्रकार के मन्तव्यों की अलग–अलग समझने का तथा उपहार के लेन–देन में शामिल दोनों पक्षों के व्यवहार को जानने का प्रयास अध्येताओं ने किया है।

सोलोमन (1992) इन मंतव्यों को दो भागों में विभाजित करता है – एक उपयोगितावादी, दूसरा सुखात्मक।

पहला लाभ प्राप्त करने की उपलब्धि की श्रेणी में आता है और भावनात्मक अनुभूति का प्रतिनिधित्व करता है। इसी प्रकार उपहार देने और प्राप्त करने की सुखात्मक अनुभूति को शैरी (1983) ने दो श्रेणियों में विभाजित किया है – परोपकारी तथा नास्तिक। परोपकारी मन्तव्य में उपहार प्राप्त करने वाले के सुख में वृद्धि करना शामिल होता है, नास्तिक मन्तव्य अपने लिये देने वाले की व्यक्तिगत लाभ की भावना पर केन्द्रित होता है। इस दृष्टि से देखें तो उपहार दिया जाना सदैव उपहार प्राप्त करने वाले प्रभावित करने के लिये होता है। क्योंकि उपहार देने वाले के मन में उपहार प्रदान करने का सुख प्राप्त करने की इच्छा किसी न किसी रूप में अवश्य मौजूद रहती है।

4.6 उपहार देने के दृष्टिकोण

उपहार देने के आयामों का अध्ययन करने से हमें उपहार देने के दृष्टिकोणों का पता लगता है और हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि कुल मिलाकर उपहार देने के तीन दृष्टिकोण होते हैं। ये हैं – 1) नृविज्ञान आधारित दृष्टिकोण, 2) समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण तथा 3) आर्थिक दृष्टिकोण।

4.6.1 नृविज्ञानीय दृष्टिकोण

सुप्रसिद्ध समाज विज्ञानी ब्रोनिसलॉ मौलिनोवस्की (1922) तथा मार्सेल मॉस (1990 {1950}) का विचार यह है कि उपहार देने की परम्परा मूल रूप से आदिकालीन समाजों में मौजूद थी। इन विद्वानों के अनुसार लोग केवल इसलिये उपहार दिया करते थे कि बदले में उन्हें वे ब्याज सहित लौटाये जायें। इससे यह अर्थ ध्वनित होता है कि आदिकालीन समाजों में उपहार की कीमत पर विशेष ध्यान दिया जाता था। उपहार देने के बदले लोगों को जो धन प्राप्त होता था उसे वे इकट्ठा कर लेते थे और फिर उत्सवों के अवसर पर उसे खर्च करते थे, इस प्रकार प्राचीनकालीन समाजों में उपहार देना किसी व्यक्ति के अमीर होने का प्रतीक था। यह भावना वर्तमान समय में मौजूद उपहारों के आदान–प्रदान में भी देखने को मिलती है। बस अन्तर इस बात का है कि प्राचीन कालीन समाजों में उपहारों के आदान–प्रदान में पारस्परिकता विद्यमान रहती थी, जबकि आधुनिक समाजों में पारस्परिकता जैसी चीज प्रायः नगण्य होती है, अथवा हेाती ही नहीं।

4.6.2 समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण

समाजशास्त्री मत रखते है कि नृविज्ञानी ब्रोनिस्ला मेलिनोवस्की उपहार देने को आत्म विस्तार की प्रक्रिया मानते हैं। इस धारणा को थोड़ा विकास करते हुए समाजशास्त्री मानते हैं कि उपहार लोगों को आपस में जोड़ते हैं तथा उपहार के पीछे उपहार देने वाले का जो आशय होता है, उसका प्रतिनिधित्व करते हैं। समाजवादियों के अनुसार उपहार देना स्वयं को उपहार लेने वाले तक पहुंचाने का माध्यम है। इससे उपहार प्राप्त करने वाले की पहचान निर्मित होती है। इस प्रकार उपहार दिया जाना देने वाले और लेने वाले के बीच एक सम्बंध का निर्माण करता है। उपहार देने वाले का उपहार देने का आशय उपहार में अंतर्निहित होता है। जिसमें उपहार के तत्व मौजूद रहते हैं – जैसे उपहार का चयन, कीमत तथा उपहार चयन करने का उत्साह आदि। ये सभी घटक व्यापक रूप से काम करते हैं, जैसे पहचान का आदान–प्रदान करना, संबंधों का नियंत्रण करना, निष्पक्ष वितरण का भावना को आगे बढ़ाना (पारस्परिक न्याय–भावना), सम्बन्ध की सीमाएं निर्धारित करना आदि–आदि। ये सब कार्य उपहार देने के मंतव्य में अंतर्निहित होते हैं।

4.6.3 आर्थिक दृष्टिकोण

उपहारों के आदान–प्रदान का अर्थशास्त्र उपहार देने की प्रक्रिया की क्षमताओं तथा अक्षमताओं को दर्शाती है। आर्थिक दृष्टिकोण द्वारा हर व्यक्ति अपने आत्महित की रक्षा करता है और साथ ही जिसे उपहार देता है उसे होने वाले लाभ को ध्यान में रखकर चलता है। आर्थिक दृष्टिकोण के अनुसार उपहारों की मौलिक विशेषता यह है कि वे संकेत का काम करते हैं जबकि समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण के अनुसार उपहार प्रतीक का काम करते हैं। उपहार देने वाले की धारणा उपहार लेने वाले के प्रति कुछ इस तरह होती है कि वह उससे बदले में कुछ तुरंत प्राप्त करने की उम्मीद नहीं रखता, परंतु यह उम्मीद जरूर रखता है कि जो कुछ वो बदले में देगा उसका आर्थिक मूल्य क्या होगा। उदाहरण के लिये एक व्यक्ति दुकान पर जाता है और प्राप्त किये हुए उपहार के बराबर की कीमत की किसी वस्तु की मांग करता है जिसे वो उपहार देने वाले को दे सके तो वह तुंरत लौटाने की प्रक्रिया के अंतर्गत आता है और यह संकेत देता है कि वह उपहार देने वाले से कोई संबंध रखना नहीं चाता इसलिए बराबर की

कीमत का प्रति उपहार देकर इस संबंध से पिंड छुड़ाना चाहता है कि वे पारस्परिकता बनाये रखे और उपहारों का आदान–प्रदान करते रहें। जहां पर उपहार तुंरत वापसी की अपेक्षा रखे बिना तहे दिल से दिये जाते हैं वहां भी आर्थिक दृष्टिकोण अंतर्निहित होता है। जैसे – उपहार दिये जाने के बदले में तुरंत आत्मसम्मान पाने की इच्छा, प्यार, स्नेह और प्रतिष्ठा प्राप्त करने की इच्छा आदि।

बोध प्रश्न 2

1) अपने शब्दों में उपहार की परिभाषा दीजिये।

.....

.....

.....

.....

2) ''द एलीमेंट्री स्ट्रक्चर्स ऑफ किनशिप'' नामक पुस्तक का लेखक कौन है?

.....

.....

.....

.....

3) नीचे दिये गये कथनों में से कौन सा कथन उपहारों के आयाम नहीं हैं?

अ) व्यक्तिगत आयाम

ब) नातेदारी आयाम

स) सामाजिक आयाम

द) आर्थिक आयाम

4) उपहारों के आदान–प्रदान में महसूस होने वाली नकारात्मक संवेदनाएं कभी–कभी सही नहीं होती।

अ) सत्य

ब) असत्य

4.7 सारांश

इस इकाई में आपने पारस्परिकता की धारणा और उपहार के बारे में पढ़ा। यह दो भागों में विभाजित है। भाग एक – पारस्परिकता की धारणा से संबंधित है। भाग दो – उपहार के धारणा से संबंधित है। उपहारों का आदान–प्रदान एक जटिल प्रक्रिया है। इसमें ठोस तथा ऐसी गैर–ठोस वस्तुएँ भी आती हैं जिनका वितरण नहीं किया जा सकता। उपहार प्रतीकात्मक रूप से लोगों को अवसर देता है कि वे उपहार प्राप्त करने वाले तक उपहार में छिपी भावनाओं को पहुँचा सके और उनके बीच संबंधों की दृढ़ता का मार्ग प्रशस्त हो। इस भावना से प्रेरित होकर उपहार देने वाला उपहार खरीदने में मोटी रकम खर्च करने को भी तैयार हो जाता है। क्योंकि उपहार देने वाले की भावनाओं को प्राप्त करने वाले तक पहुँचाने का एक सशक्त माध्यम है। साथ ही

एक बात और होती है कि उपहार देने की प्रकृति में लगातार परिवर्तन आता रहता है। उपहार देने को घटनाओं तथा उनके पीछे छिपे मंतव्यों में अंतर होता रहता है। इस इकाई में यह समझाने का प्रयास किया गया है कि किस प्रकार आर्थिक दृष्टि से उपहार देने की उदारता आत्म–हित में बदल जाती है। लेकिन सामाजिक आयाम के अनुसार लगातार उपहारों के आदान–प्रदान से उपहार देने व उपहार लेने वालों के बीच संबंध मजबूत हो जाते हैं। उपहार देने के तीन स्पष्ट दृष्टिकोण होते हैं जिनके माध्यम से यह समझा जा सकता है कि उपहार देने की धारणाएं तथा उनके बदले में कुछ पाने से जुड़ी धारणाओं के स्वरूप क्या–क्या होते हैं। उपहारों के आदान–प्रदान में पारस्परिकता का सिद्धांत अंतर्निहित होता है जिसमें उपहार के पांच तत्व मौजूद रहते हैं – जैसे, कीमत, दूसरों का सम्मान, दायित्व बोध या कृतज्ञता, नैतिक पक्ष तथा परोपकारी और प्रभाव छोड़ने का भाव। उनके अलावा, कुछ ऐसे दबाव भी होते हैं जो आदान–प्रदान की प्रथा में पारस्परिकता की प्रकृति तय करते हैं। इस इकाई में विभिन्न प्रकार की पारस्परिकताओं का वर्णन भी किया गया है तथा यह बताने का प्रयास भी किया गया है कि वे दूसरों से किस प्रकार भिन्न हैं।

4.8 संदर्भ

द गिफ्ट ''द फॉर्म एण्ड रीजन फॉर एक्सचेंज इन आरचाइक सोसाइटीज'' (डब्ल्यू. डी. हाल्स द्वारा अनुवादित 1990 तथ मेरी डगडस द्वारा आगे आमुखित मार्सेल मॉस (1990/1950), रूटलैग, लंदन।

डी चील (1988). द गिफ्ट इकोनॉमी – रूटलैज, लंदन।

''गिफ्ट एज इकोनोमिक सिगनल्स एण्ड सोशल सिम्बल्स'' अमेरिकन जनरल ऑफ सोहयोलॉजी, 94 (सप्लीमेंट), पृ. सं. 180 – एस 214।

एस सी कोम (2008). रैसीप्रोसिटी : ''एन इकोनॉमिक्स ऑफ सोशल रिलेशन्स'' केंब्रिज यूनीवर्सिटी प्रैस।

ए. डूब्ल्यू. गोल्डनर (1960). द नोर्म ऑफ रैसीप्रोसिटीः ''ए प्रिलेमिनरी स्टेटमेंट'' अमेरिकन सोश्योलॉजिकल रिव्यू 25 (2) पी पी 161–178।

पीपी इके (1974). ''सोशल एक्सचेंज थ्यौरी : द टू ट्रेडीशन्स'' – हावर्ड यूनीवर्सिटी प्रैस।

एस गैचटर एण्ड ई फेहर (1998). ''रैसीप्रोहिटी एण्ड इकोनोमिक्स : द इकोनॉमिक इम्पलीकेशन्स ऑफ होमोरीप्रोकन्स'', यूरोपियन इकोनॉमिक रिव्यू, 42 (3), पीपी 845–859।

''कोऑपरेटिव विहेवियर कैसकेट्स इन हयूमन सोशल नेटवर्कस'' – एन. ए. क्रिस्टेकिस एण्ड जे. एच. फोलर (2010) प्रोसीडिंग्स ऑफ द नेशनल एकेडेमी ऑफ साइन्सिज यू. एस. ए. 107 (12) पी.पी. 5334–5338।

दी ग्रेनर एण्ड जे वैगनर (1991). ''इकोनॉमिक डाइमैन्शन्स ऑफ हाउसहोल्ड गिफ्टगिविंग'', जरनल ऑफ कन्ज्यूमर रिसर्च, 18 (दिसम्बर), पी. पी. 368–379।

ए डब्ल्यू गोल्डनर (1960). ''द नार्म ऑफ रैसीप्रोसिटी : ए प्रीलिमिनरी स्अेटमेंट'', अमेरिकन सोश्योलोजिकल रिव्यू, 25 (2), पी. पी. 161–178।

जी. होमन्स (1958). ''सोशल बिहेवियर एज एक्सचेंज'' अमेरिकन जरनल ऑफ सोश्योलॉजी, 63 (6) पी. पी. 597–606।

टी, इन गोल्ड (1986). ''द एप्रोप्रियेशन ऑफ नेचर : एसेज ऑन हयूमन इकोलॉजी एण्ड सोशल रिलेशन्स'', यूनीवर्सिटी प्रैस मैनचेस्टर।

पी. पोलोक (1999). ''द इकोनॉमीज ऑफ ऑन लाइन कोओपरेशन : गिफ्ट्स एण्ड पब्लिक गुडस इन साइबर पेस''। ''कम्यूनिटीज इन साइबर पेस'', (पी.पी. 220–239), रूटलैज, लन्दन।

सी. लेवी स्ट्रॉस (1969). ''द एलीमैन्ट्री स्ट्रक्चर्स ऑफ किनशिप'', अय्यर एण्ड स्पॉटिस बूड, लन्दन।

बी. मेलिनोवस्की (1922). ''आरगोनट्स ऑफ द वैस्टर्न पैसीफिक'', रूटलैज एण्ड केगन, लन्दन।

जे. राक्स (1971). ''ए थ्यौरी ऑफ जस्टिस'', हारवर्ड यूनीवर्सिटी प्रैस।

एम. साहिंस (1972). ''स्टोन एज इकोनोमिक्स'', एन. वाई : एलडाइन।

ई. शैफलिन (1980) रैसीप्रोसिटी एण्ड द कन्सट्रक्शन ऑफ रिएलिटी, मैन, 15 (3) पी. पी. – 502–517।

जे. एफ. शैरी जूनियर (1983). गिफ्ट गिविंग इन एन्ग्रीपॉलॉजीकल पर्सपैक्टिक्स'', जरनल ऑफ कन्ज्यूमर रिसर्च, 10 (2) पी.पी. 157–168।

एम आर सोलोन (1992). ''कम्ज्यूमर विहेवियर : हैविंग, बीइंग एण्ड वाइंग'' एम. ए. वोस्टन : एलीन एण्ड वेकन।

जे. वाल्ड फोगल (2002). ''गिफ्ट्स कैस एण्ड स्टिगमा'', इकोनॉमिक इन्क्वायरी, 40 (3) पी. पी. 415–427।

4.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) पारस्परिकता सेवाओं या वस्तुओं के पारस्परिक आदान–प्रदान की एक प्रविधि है जो दो पक्षों के बीच होती है जो दोनों पक्षों के संबंधों को बनाए रखने तथा भविष्य में आदान–प्रदान करते रहने के लिए प्रोत्साहित करती है।

2) अ) वैधानिक प्रवर्तन

ब) संतुलित पारस्परिकता

3) स)

बोध प्रश्न 2

1) उपहार एक भौतिक अथवा अभौतिक वस्तु होती है जिसे अपनी ओर से स्वतंत्रतापूर्वक एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति को दिया जाता है अथवा प्रार्थना किये जाने पर दिया जाता है। इसमें तुरंत वापसी की अपेक्षा नगण्य होती है।

2) क्लोड, लेवी स्ट्रॉस

3) स)

4) सत्य

इकाई 5 विनिमय एवं मुद्रा*

संरचना

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 मुद्रा और विनिमय का अर्थ

5.2.1 मुद्रा

5.2.2 विनिमय

5.3 विनिमय का इतिहास

5.4 विनिमय के बदलते आयाम

5.4.1 आखेट और खाद्य पदार्थों के संकलन करने वाले समाजों में विनिमय का माध्यम

5.4.2 चरवाहा समाजों में विनिमय का माध्यम

5.4.3 कृषि–आधारित समाजों में विनिमय का माध्यम

5.5 आर्थिक विनिमय के आधुनिक रूप

5.6 मुद्रा की भूमिकाएं

5.6.1 विनिमय के माध्यम

5.6.2 मूल्यों का संचित करना

5.6.3 खाते की इकाई के रूप में

5.7 मुद्रा एवं वैधता

5.8 सारांश

5.9 संदर्भ

5.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप समझ सकेंगे :

- मुद्रा एवं विनिमय की धारणा की व्याख्या;
- अतीत की विनिमय पद्धतियों का वर्णन;
- मुद्रा के आधारभूत कार्यों का वर्णन;
- विभिन्न प्रकार की मुद्राओं की तुलना; और
- मुद्रा संबंधी वैधानिक समस्याओं का वर्णन।

5.1 प्रस्तावना

चौथी इकाई में 'पारस्परिकता और उपहार' में आपने पारस्परिकता तथा उपहार तथा उसके सामाजिक महत्व की प्रकृति एवं प्रक्रिया के बारे में पढ़ा। इस इकाई 'विनिमय एवं मुद्रा' में हम सामाजिक महत्व के दूसरे पहलू की व्याख्या करेंगे।

* डॉ. ऐजाज अहमद गिलानी द्वारा लिखित।

यह जान लेना महत्वपूर्ण होगा कि विनिमय अथवा मुद्रा का वर्णन एक दूसरे की गैरमौजूदगी में नहीं किया जा सकता। संपूर्ण सामाजिक विज्ञान विषय के विद्वानों ने सदैव एक का वर्णन दूसरे के सापेक्ष किया है। क्योंकि मुद्रा का इस्तेमाल सदैव विनिमय के माध्यम के रूप में किया जाता है, अतः इस इकाई में 'मुद्रा की भूमिकाओं पर विचार किया जायेगा। विनिमय तथा मुद्रा शब्द दोनों शब्दों का इस इकाई में भी साथ–साथ वर्णन किया जायेगा। विनिमय तथा मुद्रा की धारणाओं को समझने के लिए इस इकाई में दोनों की अलग–अलग व्याख्या की जायेगी। फिर विनिमय के ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में जाकर अतीत में समाजों में उसके विभिन्न प्रकारों व माध्यमों पर प्रकाश डाला जायेगा। प्राचीन काल में वस्तु विनिमय से आरंभ करके वर्तमान समय की ई–मुद्रा, चैक तथा बिल आधारित विनिमय पद्धति तक पूरी यात्रा का विवरण प्रस्तुत किया जायेगा। जैसाकि ऊपर बताया जा चुका है मुद्रा विनिमय का एक माध्यम है, परन्तु माध्यम के अलावा मुद्रा की अन्य भूमिकाओं को भी इस इकाई में उजागर किया जायेगा। कीमत का उत्पादित वस्तुओं से क्या संबंध है, कीमत के रूप में प्राप्त धन किस प्रकार उत्पादन के संसाधन के रूप में इस्तेमाल किया जाता है, इसके अलावा भी अन्य भिन्न–भिन्न रूपों में मुद्रा का इस्तेमाल किया जाता है, इस इकाई में इसके बारे में बताया जायेगा। इससे मुद्रा की वैधता भी प्रकाश में आयेगी। इस इकाई में मुद्रा के सामाजिक पक्ष का भी वर्णन किया जायेगा, (अतीत से वर्तमान तक) जो मानव–समूहों व समुदायों को आपस में जोड़े रखता है तथा उन्हें विनिमय आधरित संबंधों को बनायें रखने के लिए अभिप्रेरित करता है।

5.2 मुद्रा तथा विनिमय का अर्थ

जब हम विनिमय के विभिन्न रूपों की चर्चा एवं वर्णन करते हैं, हमारे दिमाग दो धारणाएं एक साथ आती हैं – ये हैं – मुद्रा तथा विनिमय

5.2.1 मुद्रा

विनिमय के एक माध्यम के रूप में मुद्रा वह वस्तु है जिसे लोग उत्पादों या सेवाओं को प्राप्त करने के बदले देते हैं। परन्तु इसका दूसरा पहलू यह भी है कि उत्पादों या सेवाओं के बदले मुद्रा प्राप्त की जाती है। जैलिजर (1994) के अनुसार मुद्रा एक मात्र 'अंतपरिवर्तनीय' तथा पूर्णतः गैर 'व्यक्तिगत साधन' है। खासकर अर्थशास्त्रियों के लिए मुद्रा अपने अर्थ में विशिष्ट है, यद्यपि दिन–प्रतिदिन के विनिमय में मुद्रा विभिन्न अर्थों में मौजूद रहती है। मुद्रा के पारंपरिक इस्तेमाल से अलग हटकर अर्थशास्त्री उसका इस्तेमाल करते हैं। अर्थशास्त्रियों के लिए मुद्रा एक माध्यम है जिसके द्वारा विनिमय घटित होता है और मुद्रा को मूर्त या अमूर्त उत्पादों के बदले या अदा नहीं की गई धनराशि के बदले स्वीकार किया जाता है। मुद्रायें जैसे रूपया या डॉलर आदि धन के उपयुक्त उदाहरण हैं। जब हम धन की बात करते हैं या नकदी की बात करते हैं तो हमारे आशय मुद्रा से होता है जो कागज से बनी मुद्राओं या सिक्कों के बदले ही उपयोग में आने वाली समस्त वस्तुओं, उत्पादों तथा सेवाओं को प्राप्त करते हैं। अतः मुद्राओं या धन के बिना दुनियां में रहना एक बड़ी चुनौती होनी। यद्यपि इस अर्थ में भारी विरोध है कि धन के बिना दुनियां की उस समय कल्पना करना कठिन लगता है जब कि आदि कालीन समाजों में विनिमय का आधार मुद्रायें नहीं थीं। पहले इस बात पर विचार करते हैं कि आदिकालीन समाजों में विनिमय किस प्रकार होता था और बिना मुद्राओं वाले विनिमय से चलकर मुद्राओं के आधार पर विनिमय के युग तक हम

किस प्रकार पहुंचे। इस बात की गहराई में जाने से पहले कि अतीत में विनिमय का स्वरूप क्या था, हमें विनिमय का अवधारणा तथा उसका अर्थ व्यापक रूप से समझ लेना चाहिए।

5.2.2 विनिमय

विनिमय चीजों के लेने और देने की एक विधि है जिसमें परस्पर निर्भरता का भाव अंतर्निहित है। इसकी दो अलग विशेषताएं रेखांकित की जा सकती है – एक सहयोगी, दूसरी प्रतियोगिता परक। विनिमय की सहयोगी विशेषता की जडें लाभों की साझेदारी से अवस्थित हैं। सहयोगात्मक विशेषता वाले विनिमय दोनों पक्षों को लाभ होता है। प्रतियोगिता परक या प्रतिस्पर्धात्मक विनिमय में टकराव का भाव अंतर्निहित है। (ब्लाउॅ, 1964) विनिमय के दोनों प्रकारों की तुलनात्मक व्याख्या बदलती रहती है – निर्भर करता है कि विनिमय की प्रकृति वस्तुपरक है या व्यक्ति परक। विनिमय के दो महत्वपूर्ण रूप हैं – पारस्परिक सहमति से किया जाने वाला विनिमय या सौदेवाजी के आधार पर किया जाने वाला विनिमय इन दोनों रूपों को ही सहयोगी या प्रतिस्पर्धापरक विनिमय के रूप में जाना जाता है। सौदेबाजी के आधार पर किया गया विनिमय दोनों पक्षों को अपने प्रति प्रतिबद्ध बना देता है। किसी उत्पाद का मूल्य तय करने के बाद विनिमय के लिए बाध्य हो जाना भी एक प्रकार की सहमति दर्शाता है। दूसरे प्रकार के विनिमय में रुचियों का टकराव मौजूद रहता है। पारस्परिक विनिमय में यद्यपि दोनों पक्षों को लाभ होता है परन्तु कोई सौदेबाजी नहीं होती। टकराव की प्रवृत्ति प्रतिस्पर्धा के अंदर छिपी होती है, विनिमय में प्रतिस्पर्धा आते ही वह उजागर हो जाती है। जबकि बातचीत के द्वारा निष्कर्ष पर पहुंचने के बाद जो विनिमय होता हैं, उसमें दोनों पक्षों को विनिमय की शर्तें स्वीकार्य होती हैं, और दोनों पक्ष इन शर्तों से बंध जाते हैं। परन्तु पारस्परिक विनिमय में बिना प्रत्याशा के दोनों पक्ष आदान–प्रदान करते हैं और लाभान्वित होते है।

5.3 विनिमय का इतिहास

लोग युगों से समुदायों में रहते आये हैं। वे आदान–प्रदान की जाने वाली वस्तुओं के अंतर्निहित मूल्यों के आधार पर लोन करके काम चलाया करते थे। आगे चलकर सोने या चांदी जैसे धातुओं की बनी मुद्रायें चलन में आने लगीं। समय–समय पर इस मामले में बदलाव किये जाते रहे कि मुदायें किस प्रकार और किस चीज से तैयार की जाएं। परिणामतः अनेक वस्तुओं का इस्तेमाल मुद्रायें बनाने में इस्तेमाल किया जाने लगा। इससे यह बात स्पष्ट हो जाती हैं कि धन का महत्व लोगों की सोच में सदा मौजूद या जो विभिन्न समाजों की आवश्यकताओं व स्थितियों के अनुसार अभिव्यक्ति पाता रहा। मुद्रा की अवधारणा दो रूपों में दिखाई देती है। वस्तुओं से वस्तुओं की अदला बदली तथा मुद्रा के बदले वस्तु की प्राप्ति। पहला प्रकार चलन में मौजूद मुद्रा को वस्तु – धन कहा जा सकता है, दूसरे प्रकार चलन में कागज से बनी मुद्रा को धन के रूप में स्वीकार किया जाने लगा। (मिस्किन व सर्लेटीज, 2011) धन के उद्भव में आने की विभिन्न अवस्थाएं समय व स्थान के संदर्भ में विकसित होने वाली विभिन्न मानव सभ्यताओं में देखी जा सकती हैं। आरम्भिक अवस्था में धन का उद्भव उन वस्तुओं के रूप में हुआ था जो अदला–बदली के लिए इस्तेमाल की जाती थीं। फिर वस्तुएं धातु से बने सिक्कों के बदले प्राप्त करने की प्रथा चलन में आ गई, फिर कागज से बनी मुद्रा (बैंक – नोट) तथा साख मुद्रा (चैक) के रूप में चलन में आई।

होते–होते वह दौर भी आ गया जब प्लास्टिक से बने क्रेडिट कार्ड व डेबिट कार्ड चलन में आ गये। ऑनलाइन लेन–देन के लिए ई–मुद्रा भी चल निकली। (चिन्नामई, 2013) नीचे वस्तु से लेकर बैंक नोट तक और ई–मुद्रा तक की लेन–देन कर मात्रा के विविध रूपों का वर्णन किया गया है।

5.4 विनिमय के बदलते आयाम

अतीत काल में विनिमय के माध्यम के रूप में वस्तुओं (मूर्त व अमूर्त) का इस्तेमाल करती थीं जिन्हें सभी सामाजिक परिवेशों में स्वीकृति प्राप्त थी। हर व्यक्ति अपनी पसंद की वस्तु या सेवा प्राप्त करने के बदले वस्तुएँ प्रदान करता था और इसी तरह दूसरों के उद्देश्य पूर्ति के लिए बदले में वस्तुएँ स्वीकार भी करता था। इसका अर्थ यह है कि वस्तुओं के अंतर्निहित मूल्य ही विनिमय के आधार थे। किसी भी भौतिक पदार्थ को वस्तु के मूल्य के रूप में स्वीकार किये जाने की शर्तें सबको मंजूर थीं। वस्तु–धन का यह रूप आखेट करने और खाद्य पदार्थों को इकटठा करने वाली सभ्यता के युग में, चरवाहा युग में तथा कृषि–आधारित समाजों के दौर में मौजूद था। यद्यपि हर अगले दौर के समाजों में वस्तुओं को धन के रूप में इस्तेमाल के तरीके बदलते गये थे।

5.4.1 आखेट और खाद्य पदार्थों के संकलन करने वाले समाजों में 'विनिमय का माध्यम'

अविकसित समाजों में सबसे पहले आखेट एवं खाद्य–पदार्थ संग्रह करने वाले समाज का नाम आता है। इन समाजों के लोग शिकार करके अपना पेट भरा करते थे। इन समाजों में शिकार करके लोग संपत्ति अर्जित करते थे। शिकार करके जो कुछ लोग प्राप्त करते थे उसकी कीमत स्वीकार की जाती या, जैसे शिकार में मारे गये जानवर की खाल शरीर ढकने के लिए वस्त्र के रूप में इस्तेमाल की जाती थी। उसके बदले वस्त्र प्राप्त किये जा सकते थे। इस प्रकार यह पहले वस्तु–धन के रूप में सामने आया। इस प्रकार का वस्तु–धन का चलन दुनियां के कुछ मांगों में आज भी मौजूद है, वहाँ अब भी वस्तुओं के बदले वस्तुओं का लेन–देन होता है। शिकार से प्राप्त चीजों को वस्तु धन के रूप में इस्तेमाल करने के साथ–साथ ऐसे बीजों तथा जड़ों के बदले खाद्य सामग्री प्राप्त करने का चलन अस्तित्व में आये जिनके इस्तेमाल औषधि के रूप में किया जाता था।

5.4.2 चरवाहा समाजों में विनिमय के माध्यम

शिकारी तथा भोजन संग्रह करने वाले समाज की तरह ही चरवाहा समाजों में भी वस्तु–धन के चलन के प्रमाण मिलते हैं, परन्तु यह वस्तु धन थोड़ा अलग प्रकार का था। सभ्यता का विकास होते–होते पशुओं को धन के रूप में स्वीकार करने का प्रथा आरंभ हो गई। पशुओं का पालन करने ओर उसकी अदला–बदली या उनके बदले आवश्यकता की अन्य वस्तु प्राप्त करने की प्रथा समय बीतने के साथ–साथ पशुधन को सम्पत्ति के रूप में बढ़ाने तथा पशुओं को मूल्य के बदले बेचने का प्रथा चलन में आ गई, जो अब भी जारी है। इस विकास के साथ ही पशुओं को मारकर उसके खाल बेचने के स्थान पर सीधे–सीधे पशुओं को ही बेचा जाने लगा।

5.4.3 कृषि आधारित समाजों में विनिमय के माध्यम

कृषि आधारित समाजों में वस्तु धन खेतों में पैदा होने वाली फसलों के रूप में अस्तित्व में आया। इन फसलों में सब्जियां, फल, मक्का, चावल, गेहूं आदि अनेक प्रकार के अनाज, दलहन तथा तिलहन आदि का उत्पादन शामिल था। इसके साथ–साथ अनेक प्रकार के पशुओं व पक्षियों से मिलने वाले उत्पाद जैसे दूध, अंडा आदि वस्तु–धन के रूप में सामने आये। ऐसा भी नहीं कहा जा सकता कि कृषि आधारित समाज मुद्राओं का इस्तेमाल नहीं करते थे। वस्तु–धन का इस्तेमाल ज्यादातर वस्तु विनिमय के रूप में ही किया जाता था। ऐसी चीजों तथा सेवाओं के लिए मुद्रा का इस्तेमाल किया जाता था जो कृषि आधारित समाज खेतों में उत्पन्न नहीं कर सकता था। इस तरह के वस्तु–धन का चलन अब भी गांवों में मौजूद है परन्तु पहले की तुलना में उसमें काफी अंतर आ गया है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि वस्तु धन अब भी विभिन्न समाजों में मौजूद है। उसका स्वरूप विकसित हो गया है। चीजों के आयात और निर्यात के माध्यम से वस्तु धन का इस्तेमाल अब भी होता है। वस्तुएँ के बदले वस्तुएँ अथवा धन के बदले वस्तुओं की खरीदारी का चलन आधुनिक समाजों में भी मौजूद है। इस प्रकार इस समय दुहरी मुद्रा का चलन में है। वस्तु–धन की प्रकृति में बदलाव आया है, अब रोजमर्रा के इस्तेमाल में आने वाली चीजों के स्थान पर धात्विक वस्तुएं जैसे सोना तथा कागज की मुद्रा, बैक नोट तथा चैक आदि का इस्तेमाल होने लगा है।

5.5 आर्थिक विनिमय के आधुनिक रूप

जैसा कि पिछले खंड में बताया गया है, अब बैंकों से जारी होने वाले नोटों तथा चैकों के रूप में कागज की मुद्रा चलन में है। ये मुद्रा–आधारित अर्थव्यवस्था के आधुनिक रूप हैं तथा इन्हें सामान्यतः विनिमय की प्रक्रिया के अंतर्गत भुगतान के प्रतिमान के रूप में स्वीकृति प्राप्त है। बैंक से जारी होने वाले नोट तथा चैक भुगताने की मुद्रा के रूप में वैधानिक रूप से स्वीकार किये जाते हैं। आधुनिक प्रौद्योगिकी के व्यापक रूप चलन में उसने से बैंक प्रणाली में भारी परिवर्तन आया है। (आइंस्टीन, 2011) इसकी वैधानिक मान्यता के कारण ये मुद्राएँ अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी स्वीकृति पा चुकी हैं। फिर भी, यह नहीं कहा जा सकता कि कागज की मुद्रा के आविष्कार से धात्विक धन का अस्तित्व समाप्त हो गया है। कागज की मुद्रा के रूप में धन अर्थात सोना ठोस आधार प्रदान करता है। आवश्यकतानुसार कागज की मुद्रा को धावित्व धन अर्थात सोने में बदला जा सकता है। यही कारण है कि सोना और चांदी की कीमत में भारी उछाल आ गया है। धन के रूप में आई इस संक्राति के बाद तथा कागज की मुद्रा के रूप में मौजूद धन की अपरिवर्तनीय विशेषता के कारण बैंक द्वारा जारी किये गये और सब जगह स्वीकार किये जाते हैं क्योंकि ये नोट वैधानिक निविदा के रूप में स्थायी साख पा चुके हैं। यद्यपि कागज की मुद्रा के कुछ नकारात्मक पक्ष भी हैं, जैसे इन्हें चुराया जा सकता है और बड़ी मात्रा में इनका यातायात नहीं किया जा सकता। इसलिए आधुनिक बैंक प्रणाली ने बड़े स्तर पर विनिमय के माध्यम के रूप में चैक का चलन आरंभ किया है। यद्यपि चैक धन का वहनीय रूप हैं। परन्तु चैक बैंक के नोटों को चलन से नहीं हटा सकते। बैंक से जारी किये जाने वाले नोट तथा चैक साथ–साथ अस्तित्व में हैं तथा आधुनिक दुनिया में धन के व्यापक रूप से स्वीकार किए जाने वाले रूप है। यद्यपि दोनों के बीच एक अंतर हैं। विनिमय के बाद नोट अपनी कीमत नहीं खोते, परंतु लेन–देन/भुगतान के बाद चैक का अस्तित्व समाप्त हो

जाता है। बड़े स्तर के लेन–देन के लिए चैक विनिमय सबसे अधिक सुविधाजनक माध्यम हैं, जबकि छोटे स्तर पर विनिमय के लिए प्रायः नोटों या नकदी का इस्तेमाल किया जाता है। भुगतान की विधि में समकालीन युग में एक बड़ा बदलाव आया है। बैंक नोट तथा चैक के साथ–साथ अब बड़े सौदों में बिलों तथा सेविंग सर्टीफिकेट का ऑनलाइन भुगतान प्रक्रिया में इस्तेमाल होने लगा है।

मुद्रा का उद्भव

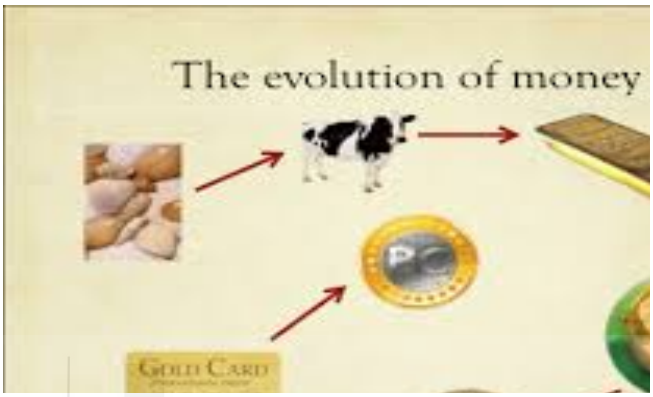

ऑनलाइन लेन–देन एक प्रकार से आर्थिक लेन–देन का डिजीटल रूप है जिसे 'ई–मनी' कहा जाता है। यह डिजीटल विनिमय प्रौद्योगिकी के नवीनतम रूपों जैसे ऑनलाइन बैंकिंग प्रणाली, मोबाइल बैंकिंग, पेटीएम आदि के कारण संभव हो सका है। जबकि कागज की मुद्रा के माध्यम से बड़े से बड़ा लेन–देन किया जा सकता है, जबकि डिजीटल के माध्यम का इस्तेमाल बहुत बड़े लेन–देन किया जा सकता है, जबकि डिजीटल माध्यम का इस्तेमाल बहुत बड़े लेन–देन के लिए नहीं किया जा सकता। ऑनलाइन लेन–देन के लिए नहीं किया जा सकता। ऑनलाइन लेन–देन की सीमाएं है, परन्तु तुरंत भुगतान की यह अच्छी सुविधा है। डिजीटल विनिमय का एक अन्य रूप डिजीटल विनिमय के लिए प्लास्टिक धन का इस्तेमाल भी किया जाता है। क्रेडिट कार्ड, डेबिट कार्ड तथा अन्य अनेक प्रकार के प्लास्टिक के कार्ड इस उद्देश्य के लिए चलन में हैं।

बोध प्रश्न 1

1) धन की अपने शब्दों में व्याख्या कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) प्लास्टिक धन प्लास्टिक का बना होता है (सत्य/असत्य)।

3) डिजीटल लेन–देन में ..... भुगतान शामिल है।

4) सहमति विनिमय से किये जाने वाले विनिमय लक्षण को ..... (सहयोगी/प्रतिस्पर्धा)

5) क्रेडिट कार्ड/डेबिट कार्ड द्वारा भुगतान ..... धन का एक रूप है।

5.6 मुद्रा की भूमिकाएं

उत्पादों तथा सेवाओं के विनिमय अथवा अन्य तरह के लेन–देन के लिए धन का इस्तेमाल जिस प्रकार से किया जाता है, वही धन के कार्य कहलाते हैं। जब तक धन किसी के पास होता है तब उसका मूल्य धन रखने वाले के अधीन रहता है। संबंधित वस्तुओं तथा सेवाओं की कीमत तय करने में भी धन की भूमिका रहती है, इस प्रकार धन के बदले प्राप्त होने वाली वस्तुओं की बेहतर खरीदारी सुनिश्चित करने में भी धन महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। धन का इस्तेमाल किया जाता है। जॉन हिक अपनी 1967 में प्रकाशित लेख श्रृंखला ''क्रिटिकल एसेज इन मोनेटरी थ्यौरी'' में लिखा है – धन की व्याख्या उस रूप में की जाती है जिस रूप में वह काम आता है। अर्थशास्त्री (इंधाम, 2004 तथा मिस्किन व सरलेटीज्, 2011) तथा समाज विज्ञानी (जैसे मुरेर, 2006 तथा केरूथर्स, 2010) ने धन के तीन काम बताये हैं। ये हैं – विनिमय के माध्यम के रूप में, कीमत के रूप में, खाते की इकाई के रूप में। उनके अनुसार धन तथा अन्य संसाधनों में मुख्य अंतर यही है कि धन वस्तुओं या संसाधनों के विनिमय के माध्यम की भूमिका निभाता है।

5.6.1 विनिमय के माध्यम

धन की प्रमुख भूमिका उसका विनिमय का माध्यम होना है। विनिमय के माध्यम होने का सामान्यताः अर्थ यह है कि उसके बदले कोई चीज या सेवा प्राप्त की जा सकती है। क्योंकि विनिमय के केंद्र में धन होता है, अतः वस्तुओं या सेवाओं को प्राप्त करने का माध्यम प्रायः धन को ही बनाया जाता है। खरीदारी करने में बैंक से जारी किये गये नोटों का इस्तेमाल किया जाता है या फिर चैक इस्तेमाल किये जाते हैं। यह धारणा कि धन विनिमय का माध्यम है धन की उस कीमत में निहित है जो धन में खरीदारी करने के लिए मौजूद रहती है। लेने–देन को सफल बनाने के लिए विनिमय के ऐसे माध्यम का होना जरूरी है जिसके द्वारा विनिमय किया जा सकता है। प्राचीन समाजों में वस्तुओं से वस्तुओं बदलने का रिवाज था और केवल तब ही विनिमय किया जाता था जब किसी खास चीज की जरूरत महसूस की जाती थी। आधुनिक युग में भुगतान के माध्यम के रूप में धन का इस्तेमाल किया जाता है जिसमें दो स्थितियाँ पहले से ही मौजूद रहती है – ऐसे व्यक्ति का होना जरूरी है जिसे उस चीज की जरूरत है जो किसी अन्य के पास है, तथा उस व्यक्ति का होना जरूरी है जिसके पास वह वस्तु है जिसकी तलाश पहले व्यक्ति को है। पहला व्यक्ति विनिमय के उस रूप में भी मौजूद था तो अतीत काल में हुआ करता था, जिसमें वस्तुओं के बदले वस्तुओं का लेन–देन किया जाता था। परन्तु दूसरे व्यक्ति का होना पारम्परिक तथा आधुनिक दोनों प्रकार के विनिमय में जरूरी है। उपयुक्त व्यक्ति की पहचान करने की प्रक्रिया उन उत्पादों पर आधारित है जो विनिमय के इच्छुक व्यक्तियों के पास मौजूद हैं। जो उनके पास नहीं हैं उनका विनिमय दुहरा संयोग कहा जायेगा। विनिमय का माध्यम दुहरे संयोग को बनाये जाने से माल के उत्पादन जो कि श्रम विभाजन के आधार पर वस्तुओं की निर्भरता को सुनिश्चित करती है। जिससे उत्पादन में वृद्धि होती है।

5.6.2 मूल्य को संचित करना

धन का दूसरा काम मूल्य को संचित करना है। धन खरीदने की शक्ति को संचालित करता है। भविष्य में खरीदारी के लिए संचित करके रखे गये धन की मात्रा खरीदारी की शक्ति का प्रतिनिधित्व करती है। इसी आशय में लोग जितना धन प्राप्त करते हैं, उसे सारे का सारा खर्च नहीं करते। प्राप्त धन के एक भाग को भविष्य में खरीदारी या अन्य रूपों में इस्तेमाल के लिए बचाकर रखते हैं। उदाहरण के लिए एक मजदूर अपने काम के बदले जितनी पगार पाता है, उसका एक हिस्सा ही खर्च करता हैं और शेष को भविष्य के विनिमय के लिए बचाकर रखता है ताकि उन दिनों उसे संकट का सामना न करना पड़े, जब उसकी आमदनी में कमी आ जाती है। धन में अंतर्निहित मूल्य के कारण धन को खरीदारी की शक्ति के रूप में अर्जित करके रखा जाता है। धन में अंतर्निहित खरीदारी की शक्ति बदलती रहती है। वर्तमान में वह कुछ और होती है भविष्य में कुछ और लेकिन धन का मूल्य सदा बना रहता है। धन की इसी शक्ति के कारण उसे लॉकर में रखा जाता है और आवश्यकता पड़ने पर उसे बाहर निकाला जाता है। अर्जित करके रखा हुआ धन अपनी उपयोगिता को खोता नहीं है। अतीत में जिस तरह खरीदने की शक्ति उसमें मौजूद थी वही शक्ति बाद में भी मौजूद रहती है।

अब प्रश्न यह उठता है कि धन के संचयन को ही मूल्य बनाये रखने का काम में क्यों लिया जाता है जबकि मूल्य को सुरक्षित रखने की शक्ति तो वस्तुओं को सुरक्षित रखने की क्षमता मौजूद रहती है। परंतु दोनों में अंतर यह है कि धन में तरलता होती है जो वस्तुओं में नहीं होती है। धन और वस्तुएं दोनों का विनिमय किया जा सकता है तथा दोनों को ही संभाल कर सुरक्षित रखा जा सकता है परन्तु दुनिया की समस्त वस्तुओं तथा संसाधनों की तुलना में धन की तरलता बहुत ज्यादा होती है। इसका अर्थ यह है कि धन के मूल्य को आंकने के लिये अथवा खरीदारी करने के लिये धन में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं करना पड़ता, उसकी कीमत ही काम चलाने के लिये काफी है, लेकिन वस्तुओं अथवा संसाधनों को खरीदारी करने के लिये पहले धन में बदलना पड़ता है। धन या मुद्रा का मूल्य नापने की आवश्यकता नहीं पड़ती उसकी प्रकृति को जानने की जरूरत ही नहीं पड़ती परन्तु वस्तु की प्रकृति और उसके आंकलन के आधार पर ही उसका मूल्य तय किया जाता है। एक बात यह भी है कि वस्तु का मूल्य प्रायः बदलता रहता है। उदाहरण के लिये यदि कोई व्यक्ति अपना कर्जा चुकाने के लिये अपनी जमीन का इस्तेमाल करना चाहता है तो उसे जमीन के उतने दाम नहीं मिल पायेंगे जितने बाजार में होने चाहिये और उसे अपनी जमीन कम कीमत में बैचनी पड़ेगी। इस उदाहरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि बिकाऊ वस्तु की कीमत प्रायः कम हो जाती है, इसलिये इस तरह की स्थिति में जमीन को मूल्य संग्रह के मामले में अधिक उपयोगी नहीं माना जा सकता जबकि धन में भरपूर तरलता होती है और इसीलिए वह मूल्य को धारण करने की बेहतर क्षमा रखता है। क्योंकि धन या मुद्रा की कीमत निश्चित होती है और वह समय के साथ बदलती नहीं है।

गतिविधि 1

सब्जी मंडी में जाइये और फलों तथा सब्जियों के बाजार का कुछ दिनों तक निरीक्षण कीजिये। देखिये फल और सब्जियों की कीमत कैसे लगाई जाती है। सब्जी और फल बेचने वालों से इस बात को जानने की कोशिश कीजिये कि इनकी कीमत घटती बढ़ती क्यों रहती है।

फलों और सब्जियों की कीमत पर तथा उनके बेचे जाने के तरीके पर एक आलेख तैयार कीजिये अपने अध्ययन केन्द्र पर जाकर अन्य साथियों के साथ इस आलेख पर चर्चा कीजिये।

5.6.3 खाते की इकाई के रूप में

धन या मुद्रा का तीसरा काम खाते की इकाई की भूमिका निभाना है। इसके माध्यम से कीमत का निर्धारण किया जाता है। वस्तु–विनिमय वाली अर्थव्यवस्था में वस्तुओं की कीमत जानने की आवश्यकता नहीं पड़ती क्योंकि वहां वस्तुओं के बदले वस्तुं ली और दी जाती है। धन या मुद्रा खाते की एक इकाई के रूप में काम करता है तथा विनिमय के समय वस्तुओं अथवा सेवाओं के मूल्य निर्धारण में सहयोगी होता है। यदि हम एक किलोग्राम चिकिन और एक किलोग्राम मटन की कीमत तय करना चाहते है तो (जैसे चिकिन की कीमत 150 रूपये प्रति किलो और मटन की कीमत 450 रूपये प्रति किलो) होगे पर हम यह कहेंगे कि चिकिन की तुलना में मटन तीन गुना मंहगा है। धन तथा वस्तुओं की सापेक्ष कीमत में इस प्रकार आसानी से तुलना की जा सकती है। वस्तुओं की कीमतें मुद्रा की कीमतों द्वारा ही तय की जाती हैं। धन खाते की इकाई के रूप में विभिन्न वस्तुओं की कीमतों की तुलना करने का काम करता है, इसका अर्थ यह हुआ कि कीमत का आप विनिमय के माध्यम पर निर्भर करता है।

वस्तुओं तथा सेवाओं की कीमतों को नापने की प्रक्रिया को सरलतापूर्वक एक उदाहरण से समझा जा सकता है। यदि हम विभिन्न देशों जैसे – अमेरिका, ब्रिटेन, भारत, यूरोप आदि देशों की मुद्राओं को लें तो हम पायेंगे कि यह सभी देश विनिमय के लिये अलग–अलग मुद्राओं का इस्तेमाल करते हैं, और उनकी मुद्रायें उनके लिये कीमत नापने की मौलिक इकाईयां हैं। इन देशाों में कोई भी चीज का किसी भी कीमत पर बेचा जाना उस देश की मुद्रा के रूप में उसकी कीमत का निर्धारण करता है। विनिमय बाजार में कम से कम कीमत पर किसी भी चीज को खरीदने के लिये हम तब उसे कम से कीमत पर प्राप्त कर सकते हैं जबकि हम निश्चित मुद्रा का इस्तेमाल करें। विभिन्न देशों में वस्तुओं की कीमतें वहीं की मुद्राओं के आधार पर अलग अलग होती हैं। वह इकाई जिसमें किसी देश में कीमत वस्तु की कीमत लगाई जाती है वह उसे देश के खाते की इकाई मानी जाती है। जैसे भारत में खाते की इकाई रूपयो को माना जाता है, अमेरिका में डॉलर को तथा यूरोपीय देशों में यूरो को।

5.7 मुद्रा एवं वैधता

ऊपर के खण्ड में हमने यह स्पष्ट कर दिया है कि मुद्रा के अनेक रूप होते है, जैसे वस्तु मुद्रा, कागज की मुद्रा, प्लास्टिक की मुद्रा, डिजीटल मुद्रा या ई–मुद्रा। सभी प्रकार की मुद्राएं विनिमय के माध्यम के रूप में काम करती हैं। परन्तु क्या ई–मुद्रा को मुद्रा के रूप में स्वीकारा जा सकता है? क्योंकि यह ऊपर वर्णित तीनों प्रकार की भूमिकाएं निभाती है। एक बात ओर स्पष्ट है कि सभी प्रकार की मुद्राएं विनिमय के माध्यम के रूप में इस्तेमाल की जा सकती हैं, परन्तु विनिमय के सभी माध्यम धन या मुद्रा का निर्माण नहीं करते। यह तर्क उस आधार की व्याख्या करता है कि जो धन का निर्माण करता है। यहाँ एक ऐसी चीज उपस्थित होती है जो धन की व्याख्या करने वाले आर्थिक पक्षों से अलग होती है और यह वैधानिकता या किसी चीज की मामूली मान्यता जो वैधानिक मान्यता प्राप्त की वैचारिक पक्ष धन का निर्माण

विनिमय के माध्यम के स्थान पर करता है। इसलिए, ई–मुद्रा को विनिमय के माध्यम का दरजा प्राप्त होता है, जबकि इसे मुद्रा या धन के रूप में स्वीकारा नहीं जाता। क्योंकि भारत में ई–मुद्रा को कानूनी मान्यता प्राप्त नहीं है। ई–मुद्रा द्वारा लेन–देन किया जाता है उसे दो पक्षों के बीच मुख्यतः आपसी समझौते के आधार पर किया जाता है।

ऊपर उल्लिखित दलील को उस कीमत द्वारा व्याख्यायित किया जा सकता है जिसे सरकार ने धन की पदार्थ के रूप में निर्मित के बिना भी मान्यता प्रदान की है। सरकार मुद्रा के रूप में धन जारी करती है और उसे कोई कीमत प्रदान करती है तथा उसे लेन–देन के लिए इस्तेमाल करने हेतु कानूनी मान्यता प्रदान कर देती है।

सरकार द्वारा जारी की गई मुद्रा को वैधानिक अनुमोदन प्राप्त होता है, अतः अर्थशास्त्री इसे 'वैधानिक संविदा धन' की संज्ञा देते हैं, (फुलर, 1989) और इसी से यह लोगों के बीच विनिमय के लिए माध्यम के रूप में स्वीकारे जाने के लिए साख प्राप्त कर लेती है। वैधानिक सांविदिक धन/मुद्रा ही एकमात्र वह माध्यम है जिसे वित्तीय संस्थान मान्यता प्रदान करते हैं तथा अपने उपभोक्ताओं के साथ उसे चलन में लाते हैं। यद्यपि ऋण के रूप में लौटाने की मुद्रा की कीमत की एक सीमा होती है। उदाहरण के लिए भारत में 20वीं शताब्दी के अंतिम दिनों में कम कीमत वाले सिक्कों – 25 पैसे, या 50 पैसे के सिक्को की कीमत की सीमा 25 रूपये तक सीमित कर दी गई। रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया ने 25 पैसे अथवा उससे कम कीमत वाले सिक्को को चलन से बाहर करने की घोषणा कर दी, और 30 जून 2011 से (चिन्नामाई, 2013) से यह सिक्के पूरी तरह चलन से बाहर हो गये। इसलिए विनिमय बाजार में एक सीमा से निर्धारित अधिक निचली कीमत वाली मुद्रा को विनिमय के लिए मुद्रा के रूप में लोगों द्वारा स्वीकार करने से इन्कार कर दिया जाता है। ऐसी स्थिति में निचले मूल्य वर्ग के सिक्के अगर सीमा से ज्यादा निर्धारित है तो उन्हें वैधानिक मुद्रा माना जायेगा।

बोध प्रश्न 2

1) मुद्रा के तीन मौलिक कार्यों का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) वस्तुओं तथा सेवाओं की कीमत आधुनिक समाजों में केवल ई–मुद्रा द्वारा निर्धारित की जाती है। ..... (सत्य/असत्य)।

3) ई–मुद्रा क्या है? (..... मुद्रा/धन)।

4) वैधानिक संविदा मुद्रा क्या है?

.....

.....

.....

5.8 सारांश

इस इकाई में हमने धन/मुद्रा विनिमय तथा विनिमय का तरीका जो हमारे समाजों में अतीत काल में मौजूद था तथा धन या मुद्रा के वे रूप जो विनिमय प्रक्रिया में इस्तेमाल किये जाते थे। इस इकाई में मुद्रा/धन और विनिमय के इतिहास का भी संक्षेप में विवरण दिया गया। इससे पता लगता है विनिमय के आयाम लगातार बदलते रहे हैं और वस्तु विनिमय से विनिमय की यात्रा चलकर बैंक द्वारा जारी किये गये नोटों तक आ पहुंची जो बीते समय में ही आग गये थे और आज भी मौजूद हैं। इसी इकाई में यह भी स्पष्ट किया गया है कि कागज की मुद्रा किस प्रकार चलन में आई। साथ ही आधुनिक युग में विनिमय के अन्य तरीकों पर भी प्रकाश डाला गया है। इसी इकाई में हमने मुद्रा के विभिन्न कार्यों का वर्णन भी किया गया। मुद्रा के विनिमय के माध्यम के रूप में भी मुद्रा की भूमिकाओं के बारे में बताया गया। मुद्रा की कीमत तथा मुद्रा की खाते के रूप में भूमिका पर भी प्रकाश डाला गया। मुद्रा के कानूनी पक्षों के बारे बताया गया तथा यह भी बताया गया कि मुद्रा किस प्रकार वैधानिकता प्राप्त करती है।

5.9 संदर्भ

- ''द मीनिंग्स ऑफ मनीः ए सोश्योलॉजिकल प्रोस्पैक्टिव,'' थियोरेटिकल इनक्वारीज़ इन लॉ वॉल्यूम 2, नं, 51, पीपी–51–74।
- सी. आइंसटीन (2011). ''सेक्रेड इकॉनोमिक्सः मनी, गिफ्ट, एण्ड सोसाइटी इन द एज ऑफ ट्राजीशन – नार्थ एटलांटिक बुक्स।
- जी. इंगहम (2004). ''द नेचर ऑफ मनी'' – केम्ब्रिज यूनीवर्सिटी प्रैस : यू. के.।
- बी मॉनर (2006). ''द एंथ्रोपोलॉजी ऑफ मनी – एन्युअल रिव्यू ऑफ एंथ्रोपोलॉजी वोल्यूम 35 पीपी 15–36।
- विवियाना, जेलीजर, (1994). ''द सोशल मीनिंग ऑफ मनी'' न्यूयार्क : बेसिक बुक्स।
- ''एक्चेंज एण्ड पॉवर इन सोशल लाइफ'' – विली – पी एम ब्लाऊ।
- बी. जी. केरूथर्स (2010). ''द मीनिंग ऑफ मनी : ए सोश्योलॉजिक पर्स पेक्टिव'' – थियोरेटिकल इंक्वारीज इन लॉ, वोल्यूम 11 नं. 51, पी.पी. 51–74।
- ए चिन्नामई (2013). ए स्टली ऑफ करेंसी एण्ड कॉइनेज सर्कुलेशन इन इंडिया।
- सी. जे. फुलर (1989). ''मिस्कंसीविंग द ग्रेन हीप : ए क्रिटिक ऑफ द कंसैप्ट ऑफ द इंडियन जजमनी सिस्टम – इन जोनाथन पेरी एण्ड मॉरिस ब्लॉच (एडस)।
- मनी एण्ड द मोरॉल्टी ऑफ एक्सचेंज (पीपी 33–63) केंब्रिज यूनीवर्सिटी प्रैस।
- जे. आर. हिक्स, (1967). ''क्रिटिकल एसेज इन मोनेट्री थियौरी'' – ऑक्सफोर्ड : क्लेरेंडन प्रैस।

- ए सर्लेटीज एण्ड एफ मिश्किन (2011). ''द इकोनॉमिक्स ऑफ मनी, बैंकिंग एण्ड फाइनेंसियल मार्केट्स'' – फोर्थ कनाडियन एडीशन, कनाडा : पीयर्सन।

5.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) मुद्रा विनिमय का माध्यम है जिसे उत्पादों व सेवाओं की प्राप्ति के लिए इस्तेमाल में लाया जाता है।
2) गलत
3) ऑनलाइन
4) प्रतिस्पर्धा
5) प्लास्टिक

बोध प्रश्न 2

1) अ) विनिमय का माध्यम
   ब) कीमत का केंद्र
   स) खाते की इकाई
2) गलत
3) इलैक्ट्रोनिक
4) वैधानिक संविदा मुद्रा वह मुद्रा है जिसे सरकार की कानून मान्यता प्राप्त होती है।